सवालीराम का सवाल

राजेश खिंदरी

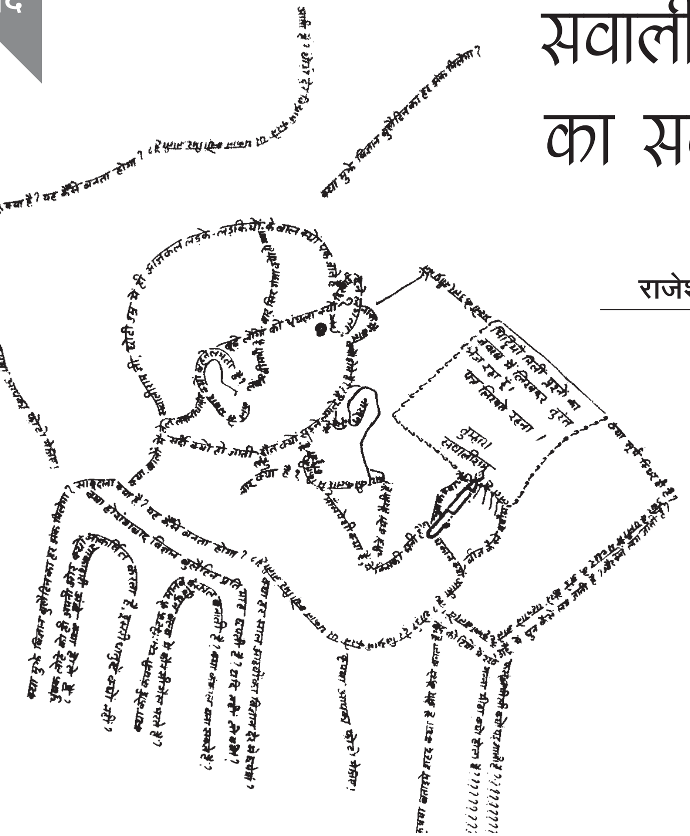

चित्रः उमेश चौहान

संदर्भ के तीसरे अंक में अमिताभ ने सवालीराम के बारे में एक लेख लिखा था - सीधे सवाल, टेढ़े जवाब। तब से मुझे लगता रहा है कि इस कड़ी में अपने कुछ अनुभव भी साझा करना चाहिए। जिन लोगों ने सवालीराम के बारे में नहीं सुना है, होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम (होविशिका) के तहत अस्सी के दशक से ही एक काल्पनिक पात्र इज़ाद किया गया था जिसकी ओर से माध्यमिक स्कूल में पढ़ने वाले हर बच्चे की किताब की शुरुआत में एक खत होता था जिसमें सवालीराम द्वारा बच्चों से अपने अनुभव, सवाल, अवलोकन आदि बाँटने की गुज़ारिश होती थी - एक अनौपचारिक-सा खत। इसलिए होशंगाबाद ज़िले-भर में फैली हुई

माध्यमिक शालाओं (एवं बाद में अन्य चौदह ज़िलों के चुनिन्दा स्कूलों से भी) से 6वीं से 8वीं के बच्चे अपने सवाल एवं अनुभव लिखकर सवालीराम के नाम खत शिक्षा विभाग के दफ्तर में भेजते जहाँ से छोटा-बड़ा ढेर हर हफ्ते एकलव्य के होशंगाबाद दफ्तर पहुँच जाता। होविशिका के तहत सदैव यह कोशिश रही कि हर छात्र के खत का जवाब अलग से लिखकर भेजा जाए, यानी कि हर बच्चे को व्यक्तिगत पत्र। साथ ही यह परम्परा भी रही कि जहाँ कहीं सम्भव हो, सीधे-सपाट जवाब न भेजकर या तो जवाब की तरफ इशाराभर किया जाए या कुछ प्रयोग आदि सुझाए जाएँ, ताकि आगे की तलाश विद्यार्थी खुद जारी रख सके। कभी-कभी प्रतिप्रश्न का सिलसिला भी शुरू किया जाता था, उन बच्चों के साथ।

होविशिका समूह के अन्दर अलग-अलग समय कोई-न-कोई इस काम की प्रमुख ज़िम्मेदारी सम्भाल रहा होता यानी रोज़ दो-चार बच्चों के खतों के जवाब ढूँढ़कर भेजने का प्रयास करना। परन्तु यह काम खासा दुष्कर रहा है इसलिए हर महीने अच्छा-खासा बैकलॉग इकट्ठा हो जाता, अनुत्तरित खतों और सवालों की थप्पी बढ़ने लगती जिसके लिए विभिन्न उपाय करते रहना पड़ता। अक्सर साल में एक-दो बार इकट्ठे मिलकर कार्यशाला के माध्यम से इकट्ठे हुए खतों के जवाब देने का प्रयास होता, साथ ही देशभर के विभिन्न संस्थानों में फैले हुए होविशिका के स्रोतदल की मदद लेने के लिए उन्हें खतों के पुलिन्दे भेज दिए जाते। जनवरी-फरवरी 1995 की *संदर्भ* में छपे उस लेख में अमिताभ ने आई.आई.टी. कानपुर में भौतिकशास्त्र पढ़ाने के दौरान अस्सी के दशक में अपने छात्रों के साथ मिलकर सवालीराम के खतों के जवाब देने के प्रयासों के बहुत-से मज़ेदार अनुभवों एवं किस्सों का ज़िक्र किया था। बहुत ही गज़ब का लेख है, ज़रूर पढ़िएगा उसे समय निकालकर। एकलव्य की वेबसाइट पर *संदर्भ* के सभी अंक उपलब्ध हैं इसलिए ढूँढ़ने में भी मुश्किल नहीं होनी चाहिए।

तो एक ऐसे ही दौर में नब्बे के दशक के शुरुआती सालों में सवालीराम को आए खतों का जवाब देने की एक स्थानीय कार्यशाला के दौरान एक-एक करके गट्ठर में से खत निकालकर उन्हें पढ़ा जा रहा था। ऐसी कार्यशालाओं में, जिनमें होविशिका की टीम के साथ-साथ स्थानीय युवा

साथी भी शामिल होते थे, सबसे पहले पोस्टकार्ड और अन्तर्देशीय पर लिखे गए बच्चों के खतों को एक-साथ मिलकर एक-एक कर पढ़ा जाता और साथ ही सम्भावित जवाब एवं रिस्पोंस की चर्चा की जाती। कम ही खत लिफाफे में आते, ज़्यादातर सवाल पोस्टकार्ड पर लिखे होते थे। ऐसे ही पोस्टकार्ड पर एक बच्चे ने दो-तीन लाइनों में एक सवाल पूछा था - मैंने जंगल में देखा है कि बेलों की कुण्डलियाँ एक ही तरफ घूमी होती हैं। ऐसा क्यों होता है?

बच्चे का सवाल पढ़ते ही आपस में चर्चा छिड़ गई, सबसे पहले कि वास्तव में ऐसा होता है क्या? और अगर होता भी है तो क्या एक बेल की समस्त कुण्डलियाँ एक ही तरफ घूमती हैं? या एक ही बेल पर दोनों तरह से घूमते हुए तन्तु पाए जाते हैं? या क्या एक प्रजाति की सब बेलों की कुण्डलियाँ एक ही तरह की होती हैं? यानी कि क्या करेले की एक लता की समस्त कुण्डलियाँ एक ही तरफ होंगी या फिर करेले की सब लताओं की कुण्डलियाँ? ऐसे बहुत-से सवाल उठ खड़े हुए। उस समय जो छह-सात लोग मौजूद थे उनमें से कोई भी जीवविज्ञान का विद्यार्थी नहीं रहा था, न ही हम में से कोई जंगल-ज़मीन से बहुत करीब से जुड़ा था जिसने इस पहलू पर बारीकी से गौर किया हो। इसलिए तय हुआ कि सबसे अच्छा यही होगा कि इस खत का जवाब मुलतवी रखकर इसे स्रोतदल के कुछ सदस्यों को भेजा जाए और उनसे प्राप्त जानकारी के आधार पर बाद में इस विद्यार्थी के खत का जवाब दिया जाए। तो उसी दिन होविशिका के तीन-चार रिसोर्स पर्सन्स को खत लिखकर रवाना कर दिए (ईमेल को

चित्र: कनक शशि

संवाद का सामान्य माध्यम बनने में अभी पाँच-दस साल बाकी थे)।

शुरू से यानी सत्तर के दशक से ही इन्दौर में होविशिका का जीवविज्ञान स्रोत समूह सबसे सक्रिय रहा है इसलिए अपेक्षित रूप से एकाध हफ्ते में वहाँ के सक्रिय सदस्यों में से एक, किशोर पंवार का सबसे पहले जवाब आया। किशोर ने लिखा था कि अलग-अलग प्रजातियों में बेलों के स्प्रिंगनुमा तन्तुओं (प्रतान) के घूमने की दिशा अलग-अलग हो सकती है परन्तु एक ही प्रजाति के समस्त पौधों में यह दिशा एक जैसी होती है यानी कि सेम की समस्त बेलों की कुण्डलियाँ एक ही दिशा में मुड़ी हुई होंगी। परन्तु यह सम्भव है कि कुछ अन्य प्रजातियों में बेलों की कुण्डलियों के घूमने की दिशा इससे विपरीत हो।

इस जवाब में और अधिक जानकारी नहीं थी - हमारे स्वाभाविक कौतूहल के बारे में कि कौन-कौन-सी बेलों में ये कुण्डलियाँ घड़ी के काँटों की दिशा में घूमती हैं और कौन-सी बेलों में घड़ी के काँटों की उलटी दिशा में? या फिर कि ऐसा होता क्यों है?

इस बीच कुछ दिन बाद हमारे वरिष्ठ भौतिकशास्त्री साथी होशंगाबाद आए तो उनसे भी चर्चा हुई इस सवाल के बारे में। उनका कहना था कि यह सम्भावना है कि इस घटना का सम्बन्ध एक महत्वपूर्ण तथ्य से हो जिसकी खोज पिछली सदी के मध्य में हुई थी और जिसका उल्लेख आइंस्टाइन ने भी अपने पर्चों में किया था - जिसका नाम कोरियोलिस फोर्स है। यह पाया गया है कि जब नहाने के बाद किसी बाथटब में से पानी निकालने के लिए उसका नीचे वाला छेद खोला जाता है तो धीरे-धीरे पानी घूमते-घूमते निकलने लगता है, यानी एक छोटा-सा भँवर-सा बन जाता है। यह प्रयोग कितनी भी बार दोहराया जाए, हर बार टब में से बाहर निकलने वाले पानी के घूमने की दिशा एक जैसी होती है (बाद में पता चला कि यह प्रयोग इतना भी सरल नहीं है)। उन्होंने यह भी बताया कि पृथ्वी के उत्तरी एवं दक्षिणी गोलार्द्धों में इस परिघटना में पैदा होने वाले भँवर की दिशा उलटी होती है। यानी कि पृथ्वी के उत्तरी गोलार्द्ध में बाथटब में भँवर एंटी-क्लॉकवाइज़ दिशा में घूमते हैं तो दक्षिणी गोलार्द्ध में क्लॉकवाइज़। उन्होंने कयास लगाया कि सम्भव है बेलों की कुण्डलियों के घूमने की दिशा भी इसी तरह उत्तरी और दक्षिण गोलार्द्ध में विपरीत हो और कोरियोलिस बल से जुड़ी हो।

यह हमारे लिए एकदम नई जानकारी थी इसलिए हमने होशंगाबाद ऑफिस की रेफरेन्स लायब्रेरी को तुरन्त खंगालकर इस विषय में पढ़ना शुरू किया और पाया कि ऐसी स्थितियों में जहाँ घूर्णन गतियाँ उपस्थित होती हैं, कई विशेष परिघटनाएँ देखने को मिलती हैं। ऐसी कई घटनाओं के बारे में पहले से जानकारी थी परन्तु 1835

में एक फ्रेंच वैज्ञानिक गास्पार्ड गुस्ताव कोरियोलिस ने इन घटनाओं की बल-आधारित गणितीय व्याख्या की (देखें बॉक्स)।

एकाध हफ्ता गुज़रा होगा कि एक और खत आ टपका - इस बार हमारे आधुनिक जीवविज्ञानी मित्र नीरज जैन का जो उस समय हैदराबाद स्थित

कोरियोलिस बल

यह बल सबसे स्पष्ट रूप में तब प्रतीत होता है जब पृथ्वी पर वस्तुएँ देशांश के समान्तर दिशा में गति करती हैं। पृथ्वी के किसी देशांश के समान्तर उत्तर से दक्षिण की ओर गति करती हुई कोई वस्तु उत्तरी गोलार्द्ध में दाहिनी ओर मुड़ती प्रतीत होती है, और दक्षिणी गोलार्द्ध में बाईं ओर। यह दो कारणों से होता है, एक तो पृथ्वी पूर्व की तरफ घूमती है और दूसरी पृथ्वी की सतह पर स्पर्श-रेखीय गति यानी टेंजेंशियल विलोसिटी अक्षांश पर निर्भर करती है। ठीक उत्तरी ध्रुव पर यह गति शून्य होती है और भूमध्य रेखा की तरफ जाते-जाते यह बढ़ने लगती है। यानी कि कोरियोलिस विचलन वस्तु की गति, पृथ्वी के घूर्णन और वस्तु किस अक्षांश पर है, इन सब पर निर्भर करता है।

पृथ्वी के सन्दर्भ में कोरियोलिस बल का मौसम विज्ञान एवं समुद्र विज्ञान में काफी महत्व है क्योंकि अन्य कारकों के साथ-साथ इसकी वजह से ही वातावरण में हवा के प्रवाह व समुद्र में जलधाराओं की दिशा निर्धारित होती है। ऐसे ही अन्तरिक्ष विज्ञान के लिए इस बल को ध्यान में रखना अत्यन्त ज़रूरी होता है क्योंकि पृथ्वी से दागे गए रॉकेट की दिशा पर भी यह प्रभाव डालता है। अन्तरिक्ष विज्ञान में इसका महत्व अन्य ग्रहों एवं तारों के सन्दर्भ में भी है क्योंकि ये सब आकाशीय पिण्ड घूर्णन करते हैं और घूर्णन से पैदा होने वाले कोरियोलिस बल का प्रभाव सम्बन्धित आकाशीय पिण्ड की परिघटनाओं पर पड़ता है, चाहे वो सूर्य पर मौजूद सन-स्पॉट हों या गुरू की गैसीय सतह पर लगातार बनते-बिगड़ते चक्रवात।

अगर इसी को सामान्यीकृत करें तो कहा जा सकता है कि किसी भी घूमने वाली, घूर्णन करती हुई सन्दर्भ फ्रेम (फ्रेम ऑफ रेफरेन्स) में न्यूटन के नियमों को लागू करने के लिए कोरियोलिस बल के पहलू को भी जोड़ना पड़ता है।

एक बात और, बाथटब में से निकलने वाले पानी में भँवर की दिशा का कोरियोलिस बल के सन्दर्भ में बहुप्रचलित उदाहरण सही तो है, परन्तु बाथटब में पानी एकदम शान्त हो केवल तभी इसका असर देखने को मिलता है। अगर पहले से ही पानी में कुछ उथल-पुथल हो रही है तो छेद में से बाहर निकल रहे पानी में बनने वाले भँवर की दिशा पर स्थानीय उथल-पुथल काफी प्रभाव डाल सकती है। इसलिए अगर आपको यह प्रयोग करके देखना हो तो पानी को कई घण्टे या एकाध दिन बाथटब में बिना छेड़े पड़े रहने देना होगा।

सेंटर फॉर सेल्युलर एंड मॉलिक्यूलर बायोलॉजी में शोधरत थे। अपने खत में उन्होंने प्रकृति में पाए जाने वाले एक और गुण का ज़िक्र किया जिसे कायरेलिटी कहते हैं। इसका अर्थ है कि कई घटनाओं में यह सम्भावना रहती है कि वे दो तरह से घट सकती हैं, एक-दूसरे की मिरर-इमेज के रूप में, परन्तु उनमें से एक दूसरे पर प्रमुखता हासिल कर लेती है। जैसे अगर इन्सान के हाथ देखें तो कुछ में दाहिना हाथ प्रमुख होता है तो कुछ में बायाँ। यानी कि इनमें से एक स्थिति दूसरे से ज़्यादा अनुपात में पाई जाती है। उनका कहना था कि बेलों के स्प्रिंगनुमा अग्रभाग के घूमने की दिशा का सम्बन्ध भी कायरेलिटी से है।

अब आप समझ ही गए होंगे कि यहाँ तक पहुँचते-पहुँचते हम सब काफी चकरा गए थे। स्रोतदल द्वारा साझा की गई इन जानकारियों के बारे में जब और पढ़ने लगे तो समझ में आया कि ये मामले इतने भी सरल नहीं हैं। एक तो सटीक अवलोकन पर आधारित जानकारी के अभाव की समस्या थी तो दूसरी ओर यह समस्या कि सुझाए गए ये सब कारण किस हद तक इस घटना को प्रभावित या तय करते हैं। और हमारे पास कोई तरीका नहीं था कि हम जल्दी से पता कर सकें कि बेलों की कुण्डली वाले सवाल में इनमें से कौन-कौन-सा ज़्यादा सही या प्रभावी कारण है। खोजबीन के लिए और ज़्यादा समय भी नहीं ले सकते थे क्योंकि एक महीने से ऊपर गुज़र चुका था। बच्चे को इससे ज़्यादा इन्तज़ार करवाना ठीक नहीं होता और सामान्य डाक से खत उस तक पहुँचने में अभी एकाध हफ्ता और लगने वाला था। इसलिए हमने सीधा जवाब देने की बजाय वैज्ञानिक खोजबीन का रास्ता अपनाया। अक्सर जवाब एक अन्तर्देशीय पत्र पर भेजे जाते थे इसलिए हमने संक्षिप्त में उस विद्यार्थी को हमारी इस जद्दोजेहद और उससे उपजे विभिन्न तरह के जवाबों के दायरे से अवगत कराया। तत्पश्चात् हमने वैज्ञानिक विधि और उसमें सही जवाब तक पहुँचने के लिए सम्भव रास्तों की कुछ बात की - अवलोकन करना, उनके आधार पर परिकल्पनाएँ बनाना, और फिर उन्हें परखना कि अन्य स्थितियों में भी वे परिकल्पनाएँ कितना कारगर जवाब दे पाती हैं। यानी एक हद तक जवाब देते हुए उसे गोल-मोल कर दिया। इससे ज़्यादा कुछ कर पाना उस समय हमारे लिए सम्भव नहीं था।

***

होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम में शालाओं से नियमित अकादमिक सम्पर्क भी एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पहलू होता था जिसके तहत होविशिका कार्यकर्ता समय-समय पर शालाओं का दौरा करते रहते थे, विशेषकर अपने-अपने इलाके व दायरे में। इसे स्कूल फॉलो-अप या अनुवर्तन के नाम से जाना जाता था। स्वाभाविक है कि

कायरेलिटी

दरअसल कायरेलिटी का मामला सममिती यानी सिमेट्री से जुड़ा हुआ है। उन दो संरचनाओं को कायरल कहते हैं, जो एक-दूसरे की मिरर-इमेज हों और जिन्हें कैसे भी घुमा-फिराकर एक-दूसरे के ठीक ऊपर नहीं बैठाया जा सकता। जैसे कि इन्सान के दोनों हाथ (कोशिश करके देखिए)। एक-दूसरे के उल्टी तरफ स्पायरल बनाते दो शंख, ... और लताओं की वृद्धि के लिए दो तरह से घूमकर आगे बढ़ते तन्तु, ये सब कायरल संरचनाओं के उदाहरण हैं।

अक्सर ये कायरल स्वरूप बराबर मात्रा में नहीं पाए जाते (विशेषकर जैविक संरचनाओं में), दोनों में से कोई एक स्वरूप प्रकृति में अधिक अनुपात में पाया जाता है, जैसे कि दाहिना-हाथ प्रधान हो ऐसे इन्सान कहीं अधिक संख्या में मिलते हैं।

यह गुण मॉलिक्यूलर यानी आणविक स्तर पर बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि कई अणुओं की संरचना दो तरह से होती है जिससे एक ही कम्पोज़िशन के बावजूद वे दो अलग-अलग पदार्थ होते हैं जो कई बार बहुत ही अलग तरह से व्यवहार करते हैं। जैसे कि एक रसायन 'एस्परटेम' स्वाद में अत्यन्त मीठा होता है, जो चीनी हम इस्तेमाल करते हैं उससे 100 गुना अधिक - और उसे कृत्रिम मीठास के रूप में भी इस्तेमाल किया जाता है। परन्तु उसका कायरल मिरर-इमेज रसायन कड़वा होता है। ऐसे ही 'एस-कारवोन' नाम के रसायन से जीरे की खुशबू आती है, परन्तु उसकी कायरल प्रतिकृति 'आर-कारवोन' से पुदीने जैसी खुशबू आती है।

खासकर दवाइयों में पदार्थों की इस विशिष्टता का बहुत ध्यान रखना पड़ता है क्योंकि हो सकता है कि एक ही रसायन के दो कायरल स्वरूप बहुत ही अलग ढंग से व्यवहार करते हों और इन्सान पर उनका असर बहुत ही फर्क हो। दवाई के रूप में उस रसायन का बीमारी के लिए कारगर जो कायरल स्वरूप है उसी को एकदम शुद्ध स्वरूप में प्राप्त करके बाज़ार में उपलब्ध कराया जाए यह ज़रूरी होता है। थेलीडोमाइड नाम की एक दवाई को उबकाई एवं उल्टी रोकने के लिए गर्भवती महिलाओं के लिए काफी उपयुक्त माना जाता था और उसका साठ एवं सत्तर के दशक में कई देशों में काफी प्रचलन था। बाद में पाया गया कि इस कारण हज़ारों महिलाओं के बच्चे गम्भीर जन्म-दोष के साथ पैदा हुए। इस सन्दर्भ में किए गए अध्ययनों से पता चला कि ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि थेलीडोमाइड के दो कायरल स्वरूप होते हैं, जिनमें से एक कारगर दवाई है और दूसरा म्यूटेशन के ज़रिए गर्भ में मौजूद शिशुओं में जन्म-दोष पैदा करता है। दवा कम्पनियों ने बिना सम्पूर्ण परीक्षण के जो दवाई बाज़ार में उपलब्ध कराई थी उसमें थेलीडोमाइड के दोनों कायरल स्वरूप आधी-आधी मात्रा में मौजूद थे जिसकी वजह से दुनियाभर में ये हादसे हुए।

अलग-अलग इलाकों में स्थित छोटे-छोटे समूहों द्वारा स्थानीय फॉलो-अप करना पर्याप्त नहीं था और ज़्यादातर शालाएँ अनछुई रह जाती थीं। इसलिए कभी-कभार सघन फॉलो-अप का दौर प्लान किया जाता जिसका आशय था कि किसी एक एकलव्य केन्द्र पर होविशिका के विभिन्न इलाकों के 8-10 कार्यकर्ता इकट्ठे होंगे और दो-दो की जोड़ी में एकाध हफ्ते के लिए रोज़ 10-12 स्कूलों में सम्पर्क किया जाएगा। उन दिनों अभियान शब्द ज़्यादा प्रचलन में नहीं था परन्तु यह एक तरह का सघन सम्पर्क अभियान ही होता था।

इतने सारे लोग और हर टीम रोज़ दो स्कूल पहुँच ही पाए इसलिए अक्सर ऐसे कार्यक्रम एक चौपहिया वाहन के ज़रिए अंजाम दिए जाते थे। रोज़ एक नया रूट तय करके जीप बारी-बारी एक-एक जोड़ी को छोड़ती जाती और फिर शाम को लौटते हुए उन्हें वापस ले लिया जाता। आम तौर पर हर टोली पास के दूसरे स्कूल पैदल पहुँच जाती। बहुत ज़्यादा वक्त तो नहीं मिलता था हर स्कूल में और केवल एक सम्पर्क में बहुत गहराई से चर्चा भी नहीं हो पाती पर वहाँ पर मौजूद शिक्षा की सामान्य परिस्थितियों का एक मोटा जायज़ा लेने का प्रयास ज़रूर होता। साथ ही होशंगाबाद विज्ञान उस स्थानीय स्थिति में कैसा दिखता है उसका अन्दाज़ भी मिलता, यानी कि क्या-कुछ हो पाता है, क्या नहीं, क्यों आदि। अगर उस समय होविशिका में कोई अकादमिक काम चल रहा हो तो उससे सम्बन्धित कुछ चर्चाएँ भी विद्यार्थियों के साथ हो जातीं।

इनमें से कई में गोपाल (राठी) और मैं टीम में साथ पाए जाते क्योंकि उसकी कोशिश होती कि वो उस दिन छोड़ी जाने वाली आखिरी टोली का हिस्सा हो ताकि सबसे दूर-दराज़ के स्कूल व जगहें देखी जा सकें, और मेरी भी। इसी सिलसिले में इन दौरों के दौरान बहुत-से सुदूर कोनों में मौजूद स्कूल देखने और वहाँ पर शिक्षकों व बच्चों से बातचीत का मौका मिला - चाहे वो होशंगाबाद ज़िले की हरदा तहसील (अब एक स्वतंत्र ज़िला) के दक्षिण छोर पर सतपुड़ा में स्थित 'मकड़ई आम' की बस्ती व किला हो जो कभी गोंड राजाओं का निवास होता था (और जहाँ उन दिनों स्कूल लगता था), या फिर सिवनी मालवा तहसील के पहाड़ी हिस्से में स्थित स्कूल जहाँ मोरनी नदी नाव से पार करके जाना हुआ...।

ऐसा ही एक सघन फॉलो-अप अभियान नब्बे के दशक के बीच के सालों में पिपरिया इलाके में आयोजित हुआ। चूँकि पिपरिया में एकलव्य का केन्द्र था इसलिए पूरी टीम वहीं इकट्ठा हुई, और रोज़ जल्दी सुबह निकलकर देर रात तक पिपरिया वापस लौट आते थे। ऐसे अनुवर्तन अभियान के दौरान कभी-कभार उस ब्लॉक के होविशिका के संगम केन्द्र प्रभारी को

भी साथ ले लेते थे क्योंकि अपने ब्लॉक की शालाओं से अकादमिक व प्रशासनिक सम्पर्क व समन्वय का ज़िम्मा उसी का होता था। और इसलिए उन्हें सब मिडिल स्कूलों के बारे में अच्छी-खासी जानकारी होती थी। उस दिन बनखेड़ी तहसील का दौरा करने की योजना थी इसलिए जेपी साहू जो बनखेड़ी के संगम केन्द्र प्रभारी थे वे भी हमारे साथ चल दिए। होशंगाबाद नर्मदा के दक्षिणी छोर से सटा हुआ एक अत्यन्त लम्बा-सा ज़िला है जिसकी आखिरी पूर्वी छोर की तहसील बनखेड़ी है, उसके बाद नरसिंहपुर की गाडरवारा तहसील शुरू हो जाती है।*

अगस्त का महीना था, एक-एक करके टीमों को उनके गन्तव्य पर छोड़ते जा रहे थे, और हर बार की तरह गोपाल ने और मैंने सबसे आखिरी गाँव चुना था, बनखेड़ी तहसील का आखिरी गाँव डूमर जिसके बाद से गाडरवारा तहसील शुरू हो जाती है। हिन्दुस्तान में आज भी कई राजनैतिक इकाइयाँ भौगोलिक सीमाओं से तय होती हैं, उसी क्रम में दूधी नदी होशंगाबाद और नरसिंहपुर ज़िले की सीमा तय करती है, इसलिए यह गाँव दूधी नदी के किनारे पर स्थित है। अगस्त के महीने की बारिश की वजह से डूमर से एकाध कि.मी. पहले एक नाले में उफान था इसलिए जीप और आगे नहीं जा सकती थी, सो हम लोग उतरकर आगे का जायज़ा लेने लगे। शायद गोपाल और मैं, हमीं दोनों होते तो वहाँ से वापस लौट जाते परन्तु जेपी साहू स्थानीय इलाके से अच्छे से परिचित थे इसलिए उन्होंने भरोसा दिलाया कि बीच में पानी थोड़ा गहरा ज़रूर है परन्तु इस नाले को पैदल पार किया जा सकता है। होशंगाबाद ज़िले के एकदम आखिरी स्कूल पहुँचने का लोभ तो था ही इसलिए हम लोग भी तैयार हो गए। नाले के किनारे पर पहुँचे तो पानी में उतरने से पहले साहूजी ने हमसे पेंट उतार के अपने-अपने सिर पर रखकर उनके पीछे चलने को कहा। तो आगे साहू जी और उनके एकदम पीछे कदम रखते हुए अपने-अपने सिरों पर पेंट गुड़ी-मुड़ी करके सम्भाले हुए गोपाल और मैं - दूसरी किनार पहुँच ही गए। गोपाल के साथ हमेशा गमछा रहता है इसलिए नाले के दूसरे किनारे रुककर अपने-आप को पोंछ-पाँछकर फिर से पेंट पहनकर स्कूल तक की आधा किलोमीटर की दूरी तय की।

बारिश के मौसम के बावजूद स्कूल में 6वीं, 7वी और 8वीं के कुल मिलाकर 15-20 बच्चे मौजूद थे, और उनके बीच एक शिक्षिका। कम ही बच्चे थे और शिक्षिका भी एक ही, इसलिए सभी बच्चे एक ही कमरे में बैठे हुए

---

* *एक ज़माने में कहा जाता था कि पैसेंजर को पूर्व से पश्चिम तक पूरा होशंगाबाद ज़िला लांघने में सुबह से शाम हो जाती थी और 10-12 जगह रुकना पड़ता था। अब होशंगाबाद में से एक नया हरदा ज़िला बनने से यह लम्बाई काफी कम हो गई है।*

थे। हम भी उसी कमरे में उनसे बतियाने पहुँच गए। बातचीत का छोर कहीं से तो शुरू करना होता है इसलिए ऐसे में अक्सर सवालीराम काफी मददगार साबित होता था जिसका खत अपनी किताब में

ज़्यादातर बच्चों ने अमूमन पढ़ा होता था, और कई बच्चों में उसके बारे में, उसके व्यक्तित्व के बारे में जिज्ञासा भी होती थी। कई शालाओं में बच्चों का यही सवाल होता था कि आखिर सवालीराम है कौन।**

तो इस मौके पर दूधी नदी के किनारे के स्कूल के पानी टपकते कमरे में भी सवालीराम काम आया, कई बच्चों ने बाल वैज्ञानिक कार्य-पुस्तिका की शुरुआत में लिखा उसका खत पढ़ा था, इसलिए परिचित थे इस पात्र से। कुछ समय बाद जब बच्चों से थोड़ा परिचय और संवाद बढ़ा तो हमने पूछा कि सवालीराम का खत तो कइयों ने पढ़ा है पर किसी ने उसे खत लिखा क्या? एक कोने में बैठे आठवीं के एक बच्चे ने धीरे-से हाथ उठाया तो मैंने कहा, "क्या लिखा था, क्या पूछा था उससे?" इस पर उस बच्चे ने कहा, "मैंने पूछा था बेलों की कुण्डलियाँ एक ही दिशा में क्यों मुड़ती हैं।" यह सुनते ही सिहरन-सी दौड़ गई पूरे बदन में।

मैंने पूछा, "तो सवालीराम ने जवाब दिया क्या तुम्हारे खत का?" इसपर उसने हामी भरी, "हाँ, सवालीराम ने मेरे सवाल का जवाब भेजा था जो मैंने अपने दोस्तों को भी पढ़ाया।" थोड़ा और कुरेदकर हमने जानने की कोशिश की कि क्या लिखा था सवालीराम ने, क्या वो सवालीराम के जवाब से सन्तुष्ट था? पर उस बच्चे को व उस क्लास के औरों को ज़्यादा कुछ याद नहीं था और बहुत परवाह भी नहीं थी। उन्हें सवालीराम के हाथ से लिखा उसका जवाबी खत जो मिल गया था।

***हमारे बीच कई बार यह चर्चा भी हुई कि सवालीराम ही क्यों, सवालीसीता क्यों नहीं? और फिर यह भी कि राम और सीता ही क्यों?*

राजेश खिंदरी: संदर्भ पत्रिका से सम्बद्ध हैं।
सवालीराम का चित्र: उमेश चौहान: होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम के स्रोत शिक्षक। प्रयोग करने-करवाने और नवाचार में रुचि।
लेख के अन्य चित्र: कनक शशि: एकलव्य, भोपाल के डिज़ाइन समूह के साथ कार्यरत।